I J C R M
International Journal of Contemporary Research In Multidisciplinary

Review Article

भारत में लोक प्रशासन: शोध के रुझान और पहल

रणवीर सिंह अरोरा [1*], डॉ. शालू देवी [2]

[1] मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विभाग, आईईसी विश्वविद्यालय बद्दी सोलन, हिमाचल प्रदेश, भारत

[2] असिस्टेंट प्रोफेसर, मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विभाग, आईईसी विश्वविद्यालय बद्दी सोलन, हिमाचल प्रदेश, भारत

Corresponding Author: * रणवीर सिंह अरोरा

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.15512314

सारांश

भारत में लोक प्रशासन: शोध के रुझान और पहल रणवीर सिंह अरोरा लोक प्रशासन विभाग आईईसी विश्वविद्यालय हिमाचल, सारांश भारत में लोक प्रशासन का अध्ययन पश्चिमी दृष्टिकोण से काफी अलग है। यह हमारे लोकतंत्र के विभिन्न हितधारकों के अंतर्संबंधों पर निर्भर करता है और इसलिए अपनाई जाने वाली शोध तकनीकें सैद्धांतिक के बजाय प्रासंगिक और वास्तविक समय की होनी चाहिए। इस अनुशासन में सक्रिय शोध में लगे विद्वानों की कमी है और विषय के सार को समझने में भी कमी है। शोध पद्धतियाँ अत्यधिक गतिशील और विविध हैं, लेकिन शोधकर्ताओं को संस्थागत समर्थन की कमी का सामना करना पड़ता है और इससे विषय के विकास में बाधा आती है। सर्वेक्षण शोध पद्धतियाँ सबसे अधिक स्वीकार्य हैं, लेकिन बाहरी प्रभावों से बचने के बाद। इस क्षेत्र में अंतःविषय अनुसंधान की गुंजाइश है जो समझ के दायरे को व्यापक बनाएगी। आधुनिक तकनीक पर आधारित नई शोध तकनीकें उभर रही हैं जो वर्तमान जटिल परिदृश्य को संभालने में सक्षम हैं। इसलिए समय की मांग है कि ज्ञान की हमारी मौलिक समझ के आधार पर पाठ्यक्रम को पुनर्गठित किया जाए ताकि इसे वास्तविक जीवन की स्थितियों में लागू किया जा सके।

Manuscript Information

- **ISSN No:** 2583-7397
- **Received:** 09-05-2025
- **Accepted:** 24-05-2025
- **Published:** 25-05-2025
- **IJCRM:**4(3); 2025: 188-190
- **©2025, All Rights Reserved**
- **Plagiarism Checked:** Yes
- **Peer Review Process:** Yes

How to Cite this Article

रणवीर सिंह अरोरा, शालू देवी. भारत में लोक प्रशासन: शोध के रुझान और पहल. Int J Contemp Res Multidiscip. 2025;4(3):188-190.

Access this Article Online

www.multiarticlesjournal.com

मूलशब्द : साझा मंच, बाहरी प्रभाव, सरकारी वित्तपोषण, नियोजित शोध, वास्तविक जीवन की स्थिति, सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक चरित्र, सर्वेक्षण पद्धति।

© 2025 रणवीर सिंह अरोरा, शालू देवी. This open-access article is distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

परिचय

भारत में एक अलग अनुशासन के रूप में लोक प्रशासन का अध्ययन 1930 के दशक में शुरू हुआ, लेकिन भारतीय विश्वविद्यालयों में एक पूर्ण विकसित विषय के रूप में इसके विकास में लगभग दो दशक लग गए। इस अवधि के दौरान, इस विषय ने नियोजन, नीति निर्माण, शासन और नौकरशाही के संदर्भ में स्वतंत्रता के बाद भारत में हुए विकास को शामिल करके अपने मूल सैद्धांतिक चरित्र से अधिक व्यावहारिक रूप में विकसित किया। यह समकालीन पश्चिमी पैटर्न से काफी अलग है जो अभी भी अमेरिका और कुछ यूरोपीय देशों द्वारा संरक्षित "नए लोक प्रशासन" से प्रभावित था। इस अवधि के दौरान भारत में विकसित इस अनुशासन के दो अलग-अलग दृष्टिकोण सामाजिक समानता और सामाजिक सुधार हैं। हाल के वर्षों में इस अनुशासन के दायरे को व्यापक बनाने वाले महत्वपूर्ण मुद्दों में से एक लोकतंत्र के विभिन्न हितधारकों जैसे नौकरशाहों, राजनेताओं, वेतन भोगियों और लाभार्थियों के बीच अंतर्संबंध रहा है और इसने प्रशासकों के लिए संकट की स्थिति कैसे पैदा की है। इन मुद्दों से निपटने का वर्तमान चलन राजनीति विज्ञान, ग्रामीण विकास, शहरी नियोजन, मानव संसाधन नियोजन आदि जैसे संबंधित विषयों से विभिन्न तरीकों को संश्लेषित करना और एक अलग और पद्धतिगत दृष्टिकोण के बजाय एक समग्र समाधान के साथ आना है। इसने इस विषय को शोध विद्वानों और शिक्षाविदों के लिए अधिक व्यावहारिक और संदर्भ-विशिष्ट बना दिया है और उनमें से कुछ ने इस विषय को मानव विज्ञान, अर्थशास्त्र, दर्शन, प्रबंधन और मनोविज्ञान जैसे अधिक पारंपरिक विषयों से जोड़कर अंतःविषय अनुसंधान भी शुरू कर दिया है। यहाँ तक कि इस विषय की "सार्वजनिक" प्रकृति भी नागरिक-केंद्रित दृष्टिकोण से बदलकर एक व्यापक प्रतिमान बन गई है जिसमें नागरिक समाज, गैर-सरकारी संगठन, ट्रेड यूनियन और हमारे समाज में मौजूद विभिन्न दबाव समूह शामिल हैं। इसलिए ध्यान केवल "सार्वजनिक हित" से हटकर बड़े "सार्वजनिक मामलों" पर चला गया है।

पद्धतिगत दृष्टिकोण

चूँकि यह विषय शुरू में कुछ रूढ़िवादी नीतियों और प्रशासन के पैटर्न के आधार पर एक अत्यधिक पद्धतिगत दृष्टिकोण के रूप में विकसित हुआ था, इसलिए इसे अपने पुरातन, स्थिर और अव्यवहारिक स्वभाव से बाहर निकलने में काफी लंबा समय लगा। इससे शिक्षकों और शोधकर्ताओं के बीच इस विषय की स्वीकार्यता और व्यवहार्यता के बारे में कई संदेह पैदा हुए हैं, जिन्होंने इसकी आवश्यकता पर ही सवाल उठाना शुरू कर दिया है। इसके अलावा यह तथ्य भी है कि यह विषय अन्य विषयों के विशेषज्ञों जैसे अर्थशास्त्रियों, बैंकरों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और यहां तक कि राजनेताओं द्वारा किए गए योगदान को पहचानने में विफल रहता है, जिनकी हमारे नीतिगत निर्णयों को आकार देने और उन्हें जमीनी स्तर पर लागू करने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इससे दो गंभीर समस्याएं पैदा हुई हैं, जो मूल रूप से आपस में जुड़ी हुई हैं। पहली है इस विषय में सक्रिय रूप से शामिल होने वाले पर्याप्त शोध विद्वानों की कमी और दूसरी है इस विषय के सार के साथ-साथ इसके तरीकों और नीतियों को समझने की कमी। इसने इस विशिष्ट रूप से विविधतापूर्ण और समकालीन विषय के संवर्धन में बाधा डाली है और सामाजिक विज्ञान के एक प्रमुख विषय के रूप में इसके विकास में बाधा डाली है। इसके लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग जैसी सरकारी एजेंसियों से वित्त पोषण की मदद से इस विषय में शोधकर्ताओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए एक योजनाबद्ध दृष्टिकोण की आवश्यकता है। पाठ्यक्रम में बदलाव भारतीय विश्वविद्यालयों में पढ़ाए जा रहे लोक प्रशासन के पाठ्यक्रम का अध्ययन करने से इस विषय के छात्रों को विभिन्न शोध विधियों के बारे में पढ़ाने की आवश्यकता पर निर्णय की एकमतता सामने आती है। सामाजिक विज्ञान। ऐसा इसलिए है क्योंकि इस अनुशासन का दायरा बहुत बड़ा है क्योंकि इसकी गतिशील प्रकृति और अन्य विषयों के साथ इसके प्रासंगिक अंतर्संबंध हैं। इसलिए ग्रामीण विकास में अनुसंधान पद्धति का अध्ययन नीति नियोजन से अलग है और सरकारी संगठनों में ई-गवर्नेंस और मानव संसाधन नियोजन के बीच सांख्यिकीय अवधारणाएँ भी अलग हैं। सर्वेक्षण विधियाँ जो इस अनुशासन में एक प्रमुख भूमिका निभाती हैं, वे भी विभिन्न संदर्भों के साथ काफी हद तक भिन्न होती हैं। हालाँकि, यह देखना निराशाजनक है कि वास्तविक जीवन की समस्याओं को हल करने में ऐसे व्यावहारिक अनुसंधान अनुप्रयोगों पर बहुत कम जोर दिया गया है और अनुसंधान विधियों का उल्लेख केवल एक अध्याय में औपचारिकता के रूप में किया गया है। परिणामस्वरूप, इस अनुशासन के छात्र द्वारा अपनी पहल से प्राप्त व्यावहारिक ज्ञान को आवेदन या मान्यता का कोई माध्यम नहीं मिलता है और यह सामान्य रूप से अनुशासन को समृद्ध नहीं कर सकता है। इससे छात्रों द्वारा एक लापरवाह दृष्टिकोण अपनाया जाता है, जिनके शोध विधियों का अनुप्रयोग वैज्ञानिक और व्यावहारिक दृष्टिकोण के बजाय व्यक्तिगत पसंद और समस्या कथन की समझ पर निर्भर करता है। ऐसे शोध अध्ययनों का कोई व्यावहारिक निहितार्थ नहीं है और इसलिए हमारे समाज में मौजूद विविधता और असंख्य शोध समस्याओं के बावजूद भारत में इस विषय का गंभीर रूप से दोहन नहीं किया गया है। यह तथ्य भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद (ICSSR) और भारतीय लोक प्रशासन संस्थान (IIPA) द्वारा किए गए सर्वेक्षण रिपोर्टों में सामने आया है।

शोध विधियाँ

सर्वेक्षण अनुसंधान विधियाँ सामाजिक विज्ञान के छात्रों के बीच बहुत लोकप्रिय हैं, खासकर इस विषय से जुड़े छात्रों के बीच। बहुत से छात्र अंतःविषय अध्ययन भी अपनाते हैं, जैसे कि बजटीय नियोजन के लिए अर्थशास्त्र के साथ इस विषय को शामिल करना और नौकरशाहों के लिए प्रशिक्षण रणनीतियों के लिए मानव संसाधन प्रबंधन के साथ। हालाँकि, अधिकांश शोध परिणाम सामान्यीकरण पर पहुँचते हैं, जिनका इस विषय में बहुत सीमित अनुप्रयोग है। चिंता का एक और बिंदु इस विषय के छात्रों और सामाजिक विज्ञान के अन्य विषयों के विशेषज्ञों के बीच व्यावहारिक समाधान पर पहुँचने के लिए किसी भी चर्चा का अभाव है। सर्वेक्षण विधियाँ भारत जैसी जटिल सामाजिक व्यवस्था में कई बाहरी प्रभावों से प्रभावित हैं और इसलिए व्यवहार्य परिणाम प्राप्त करने के लिए नियंत्रित क्षेत्र प्रयोग विधि की आवश्यकता है। एक अन्य दृष्टिकोण जो सर्वेक्षण/साक्षात्कार विधि की तुलना में काफी गतिशील है, वह है संदर्भगत भिन्नताओं के आधार पर बदलती भूमिकाओं की जाँच। यह विधि एक निश्चित शोध समस्या को सीमित तरीके से समझाती है, लेकिन मौजूदा सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक पृष्ठभूमि के आधार पर विशिष्ट परिणाम देने की क्षमता रखती है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास के साथ इस अनुशासन में कई नई शोध तकनीकें विकसित हुई हैं जैसे कंप्यूटर और इलेक्ट्रॉनिक डेटा-प्रोसेसिंग, सिस्टम दृष्टिकोण और

© 2025 रणवीर सिंह अरोरा, शालू देवी. This open-access article is distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

प्रबंधन विज्ञान (मात्रात्मक-उन्मुख उपकरण) विधियाँ। इन विधियों में सूचना का व्यवस्थित प्रसंस्करण शामिल है और अधिक वस्तुनिष्ठ और विश्वसनीय परिणाम देते हैं क्योंकि वे अधिक संख्या में प्रासंगिक चरों को ध्यान में रखते हैं। व्यवसाय प्रबंधन पेशेवर लोक प्रशासन में विभिन्न निर्णय लेने की प्रक्रियाओं का अध्ययन कर रहे हैं क्योंकि उनका देश की विशाल आबादी पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। डोनाल्ड टुल और गेराल्ड अल्बम ने दो प्रकार के सर्वेक्षण विधियों, निर्णायक और बुनियादी के बीच अंतर किया है। "जबकि पहला सर्वेक्षण किसी लंबित निर्णय के लिए जानकारी प्रदान करने के लिए किया जाता है, बाद वाले मुख्य रूप से वैज्ञानिक ज्ञान की उन्नति से संबंधित होते हैं। शोध के दो तरीकों के बीच मुख्य अंतर डेटा के संग्रह और विश्लेषण में शोधकर्ता के निर्णय की स्वीकार्यता में निहित है। एक प्रामाणिक और स्वीकार्य बुनियादी सर्वेक्षण दृष्टिकोण डेटा एकत्र करने के लिए एक गंभीर प्रयास करता है ताकि उन्हें वस्तुनिष्ठ रूप से जांचा जा सके, परिणामी नमूना त्रुटियाँ यादृच्छिक हों व्यवस्थित त्रुटियाँ मापने योग्य हों और विश्लेषण के गैर-निर्णयात्मक साधनों का सहारा लिया जाए। स्वीकार्य परिणाम उत्पन्न करने के लिए इसे डिजाइन और कार्यान्वित करने के लिए मौलिक ज्ञान की आवश्यकता होती है। दूसरी ओर, निर्णयात्मक सर्वेक्षण दृष्टिकोण पर आधारित एक शोध का उपयोग इन गैर-निर्णयात्मक प्रक्रियाओं को पूरक बनाने और कुछ मामलों में प्रतिस्थापित करने के लिए किया जाता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार हमारे पास उपलब्ध ज्ञान से अनुसंधान की सबसे उपयुक्त विधि चुनने का एक अनूठा परिदृश्य है और इसके लिए अनुसंधान समस्या की जमीनी हकीकत को समझने की बहुत आवश्यकता है जिसका हमें विश्लेषण करने की आवश्यकता है। हालांकि यह कुछ हद तक सच है कि यह अनुशासन उपलब्ध तकनीकों और उपकरणों पर निर्भर करता है, फिर भी यह कहा जा सकता है कि एक अनुशासन के रूप में, लोक प्रशासन में सामाजिक विज्ञान की अन्य शाखाओं की तुलना में अध्ययन का दायरा बहुत व्यापक है। समय की मांग है कि लोक प्रशासन में अनुसंधान पद्धतियों के पाठ्यक्रमों को प्रासंगिक पैटर्न और अनुसंधान में लागू नई विधियों को ध्यान में रखते हुए पुनर्गठित किया जाए। जेम्स चार्ल्सवर्थ ने एक बार देखा था कि "लोक प्रशासन में विधि को मानकीकृत और निर्धारित नहीं किया जा सकता है: विधि स्वयं व्यक्ति है"। इसलिए, किसी भी आधुनिक समाज में, लाभार्थी, आम आदमी, श्रमिक, व्यापारिक समुदाय, विद्वान, प्रशासक और सबसे महत्वपूर्ण बात, राजनेता उस समाज को आकार देते हैं जिसमें हम रहते हैं और यह उनका जटिल अंतर्संबंध है जो अंततः प्रशासन की प्रकृति, अनुसंधान संभावनाओं और लागू किए जाने वाले अनुसंधान विधियों को तय करता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस विषय में हमारा अधिकांश अध्ययन और प्रगति तथा इसका विकास इस बात पर निर्भर करता है कि हम समाज के गतिशील स्वरूपों को किस सीमा तक आत्मसात कर पाते हैं तथा इस विषय की सामाजिक विज्ञान की अन्य धाराओं पर कितनी निर्भरता है। इस पहलू के साथ-साथ, हमें इस विषय में अनुसंधान पद्धति के सैद्धांतिक पहलुओं को समझाने से लेकर क्षेत्र भ्रमण तथा वास्तविक जीवन के अनुभवों जैसे व्यावहारिक प्रदर्शन तक अपनी शिक्षण विधियों में कई सुधार लाने होंगे। इससे छात्रों को इस विषय की मूलभूत समझ विकसित करने तथा प्रशासनिक समस्याओं के लिए यथार्थवादी और व्यवहार्य समाधान खोजने में मदद मिलेगी। सभी प्रतिष्ठित विद्वानों और शिक्षाविदों के लिए एक साझा मंच की भी आवश्यकता है, जहाँ वे समय-समय पर मिलें तथा विभिन्न मामलों में अनुसंधान पद्धति के कार्यान्वयन पर अपने निष्कर्षों और अनुभवों को साझा करें तथा वे स्वीकार्य परिणाम प्राप्त करने में कितने सफल रहे हैं, जिन्हें वास्तविक जीवन की स्थितियों में लागू किया जा सकता है। इस तरह की बातचीत से नए विचारों और संभावनाओं का उदय भी हो सकता है, जो निश्चित रूप से विषय को समृद्ध करेगा। सरकार को अनुसंधान विद्वानों के बीच समन्वय स्थापित करने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और भारतीय लोक प्रशासन संस्थान जैसी एजेंसियों का उपयोग करना चाहिए, ताकि व्यक्तिगत या संस्थान स्तर पर किसी भी नए विचार या खोज का उपयोग राष्ट्रीय स्तर पर इस विषय को समृद्ध बनाने के लिए किया जा सके। एक विषय के रूप में लोक प्रशासन उन बहुत कम विषयों में से एक है जिसका राज्य के कामकाज और विकास पर प्रभाव पड़ता है, इसलिए शोधकर्ताओं और शिक्षाविदों की मदद से इस विषय को समृद्ध करने के लिए प्रभावी कदम उठाए जाने चाहिए, ताकि यह गतिशीलता और लोकप्रियता की ऊंचाइयों को छू सके, जिसका यह पूरी तरह से हकदार है।

संदर्भ:

1. Tull D, Albaum G. *Survey research: a decisional approach*. New York: Intertext Books; 1973.
2. Cadwell L. *Methodology in the theory of public administration*. Philadelphia: American Society for Public Administration; 1968.
3. Charlesworth J. *A report and some projections relating to the present dimensions and directions of the discipline of public administration*. Philadelphia: American Society for Public Administration; 1968.
4. Jain RB. Research methodology in public administration in India: a need for new orientation. *Indian J Polit Sci*. 1977.
5. Roy P. *Cross cultural, cross national research*. Michigan: US Agency for Administration, Michigan State University; 1969.
6. Indian Council of Social Science Research. *A survey of research in public administration*. Vol. I & II. Mumbai: Allied Publishers; 1973.

Creative Commons (CC) License

This article is an open-access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.

© 2025 रणवीर सिंह अरोरा, शालू देवी. This open-access article is distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/